RAHI92
BHARTIYE KAVYASHASTRA SAMPRADAYA BY RAM KUMAR MISHRA

रीति संप्रदाय के **प्रवर्तक आचार्य वामन** माने जाते हैं। इन्होंने काव्य की आत्मा का प्रश्न सर्वप्रथम उठाते हुए रीति को काव्यात्मा घोषित किया– ***'रीतिरात्मा काव्यस्य'।***

विभिन्न आचार्यों द्वारा रीति-निरूपण

- आचार्य वामन से पहले के आचार्यों ने 'रीति' के लिये इन शब्दों का प्रयोग किया था–
  - आचार्य भरतमुनि – प्रवृत्ति
  - आचार्य भामह – काव्य-भेद के अंतर्गत विवेचन
  - आचार्य दण्डी – काव्य मार्ग

आचार्य वामन

- **सर्वप्रथम आचार्य वामन ने 'रीति' शब्द का प्रयोग** किया।
- यद्यपि आरंभिक आचार्य भरतमुनि से ही रीति एवं गुण संबंधी विवेचन आरंभ हो गया था किंतु वामन पर उनके पूर्ववर्ती आचार्यों (भरतमुनि, भामह और दण्डी) का विशेष प्रभाव नहीं पड़ा।

- आचार्य दण्डी ने 'रीति' के नियामक के रूप में 'गुण' को मान्यता दी थी और 'रीति' में व्यक्तित्व की सत्ता भी मानी थी। इसके अलावा आचार्य वामन को पूर्ववर्ती आचार्यों से प्रधानत: पारिभाषिक शब्द ही मिले।
- इनके अनुसार- **'विशिष्ट पदरचना रीतिः'।**
  (पदों की विशिष्ट रचना 'रीति' है।)
- पदों में आने वाली विशिष्टता का कारण 'गुण' को माना- **'विशेषो गुणात्मा'।**
- 'गुण' का लक्षण यह दिया- **'काव्यशोभायाः कर्तारो धर्मा गुणाः'।**
  ((काव्य की शोभा करने वाला धर्म 'गुण' है।)
- इनसे पहले 'वैदर्भी' और 'गौड़ी' की चर्चा हो चुकी थी, इन्होंने उसमें **'पांचाली' को शामिल कर रीतियों की संख्या तीन मानी।**

- इन्होंने मूलतः दस गुण माने। फिर उन्हें 'दस शब्दगुण' और 'दस अर्थगुण' के रूप में व्याख्यायित किया। ये गुण इस प्रकार हैं- ओज, प्रसाद, श्लेष, समता, समाधि, माधुर्य, सुकुमारता, सौकुमार्यम् और उदारता, अर्थव्यक्ति और कांति।
- 'रीति' और 'गुण' में अंतःसंबंध स्वीकारते हुए लिखा- 'एतासु तिसृषु रीतिषु रेखास्विव चित्रं काव्यं प्रतिष्ठितमिति' अर्थात् जैसे चित्र रेखाओं का समन्वय होता है, वैसे ही रीतियाँ भी काव्य-गुणों का समन्वय होती हैं।

रीति	गुण
वैदर्भी	समस्त गुण
गौड़ी	ओज, क्रांति
पांचाली	माधुर्य, सौकुमार्य

- समस्त गुणों के समन्वय के कारण वैदर्भी को सर्वश्रेष्ठ रीति माना।
- **आचार्य रुद्रट** ने **'वैदर्भी'** को **समासरहिता** माना किंतु **वामन** के मतानुसार वैदर्भी **हमेशा समासरहिता नहीं** होती और जब होती है तब वह **'शुद्ध वैदर्भी'** कहलाती है।

आचार्य आनंदवर्धन

- आचार्य आनंदवर्धन ने 'रीति' को 'संघटना' कहा।
- इन्होंने 'रीति' को समास से जुड़ा हुआ माना।
- इनके मतानुसार, संघटना गुण के आश्रित रहती है तथा मूलत: 'रस' की साधन है। **रस को व्यक्त करना ही संघटना का कार्य है।**
- ये **गुण** को **'चित्तवृत्ति' का पर्याय** स्वीकारते हैं। इनके अनुसार,
  - शृंगार आदि कोमल रस हैं जिनके द्वारा माधुर्य गुण चित्त को द्रुत करता है।
  - रौद्र आदि कठोर रस हैं जिनके माध्यम से ओज गुण चित्त को दीप्ति प्रदान करता है।
  - प्रसाद गुण चित्त को व्याप्ति देता है।

रीति - संघटना

आचार्य मम्मट

- **आचार्य मम्मट** 'रीति' को **'वृत्ति'** कहते हैं।
- इनके अनुसार, निश्चित वर्णों का रस से संबंधित व्यापार 'वृत्ति' है।
- इन्होंने वृत्तियों (रीतियों) और गुणों का संबंध इस तरह स्वीकृत किया-
  - उपनागरिका (वैदर्भी) - माधुर्य गुण
  - परुषा (गौड़ी) - ओज गुण
  - कोमला (पांचाली) - प्रसाद गुण
- इनके लिये भी 'वृत्ति' (रीति) रस का साधन मात्र है।
- इन्होंने आनंदवर्धन के आधार पर गुणों में चित्त की तीन वृत्तियाँ मानीं-
  - माधुर्य गुण - चित्तद्रुति
  - ओज गुण - चित्तदीप्ति
  - प्रसाद गुण - चित्तव्याप्ति

आचार्य विश्वनाथ

- **आचार्य विश्वनाथ** के अनुसार, **पद-संघटना रीति है।**
- रीति काव्य के शरीर के रूप में रहकर रस का उपकार करती है।
- **वर्गसंगुंफन के आधार पर चार रीतियाँ** मानी। वैदर्भी और पांचाली से मिश्रित **'लाटी'** रीति को भी स्वीकार किया।

रुद्रट

हिंदी में रीति-विवेचन

- **आचार्य रामचंद्र शुक्ल:** "रीति का विधान शुद्धवाद का प्रभाव उत्पन्न करने के लिये हुआ है।" इस दृष्टि से उन्होंने कोमल रसों में कोमल वर्णों; और रौद्र, भयानक आदि उग्र व कठोर रसों में परुष तथा कठोर वर्णों का प्रयोग अच्छा बताया है।
- **डॉ. नगेंद्र:** "यूरोप के आचार्यों द्वारा निर्दिष्ट शैली के तत्त्व समांतर से रीति के तत्त्वों में ही अंतर्भूत हो जाते हैं अथवा रीति के तत्त्वों का उपर्युक्त शैली तत्त्वों में अंतर्भाव हो जाता है।"

मम्मट	उपनागरिका (वैदर्भी), परुषा (गौड़ी), कोमला (पांचाली)+
विश्वनाथ	वैदर्भी, गौड़ी, पांचाली, ल्राटी

पांचाली को ग्राम्या भी कहते हैं।

- *रुद्रट ने समास को आधार बनाकर रीतियों का वर्गीकरण किया-
  वैदर्भी - समासरहिता (समास का अभाव)
  गौड़ी - दीर्घ समास बहुला (समास की अधिकता)
  लाटी - मध्यम समास युक्त (मध्यम समास)
  पांचाली - लघु समास युक्त (समास की न्यूनता)
- समास को आधार बनाकर ही रीतियों को यह भी कहा गया-
  वैदर्भी - असमस्तपदा
  गौड़ी - उद्भटपदा
  पांचाली - कोमलपदा
- #कुंतक ने रीति को 'मार्ग' के रूप में विवेचित किया और तीन मार्ग माने- सुकुमार, विचित्र और मध्यम। तत्पश्चात्, वैदर्भी, गौड़ी और पांचाली का क्रमशः इन मार्गों में समावेश किया। ये मार्ग कवि-स्वभाव पर आधारित है।
- +रीति को 'वृत्ति' कहते हुए तीन भेद किये- उपनागरिका, परुषा और कोमला। तत्पश्चात् इन्हें ही क्रमशः वैदर्भी, गौड़ी और पांचाली माना।

काव्य गुण

- यह माना गया कि काव्य का मूल रस है और रस का धर्म गुण है। गुण के बगैर रस संभव नहीं।

आचार्य	गुण-संख्या
भरतमुनि	10*
भामह	03
दण्डी	10
वामन	20#
आनंदवर्धन	03
भोजराज	24
मम्मट	03
वेदव्यास	19
विश्वनाथ	03
जगन्नाथ	03

- *भरतमुनिः माधुर्य, ओज, प्रसाद, श्लेष, समता, सुकुमारता, अर्थव्याप्ति, उदारता, क्रांति और समाधि।
- #वामन दस गुणों को शब्दगत भी मानते हैं और अर्थगत भी मानते हैं।

- सामान्यतः तीन गुण स्वीकार किये जाते हैं- माधुर्य, ओज और प्रसाद।

	माधुर्य गुण	ओज़ गुण	प्रसाद गुण
अर्थ	काव्य से हृदय में मधुरता का संचार होना 'माधुर्य गुण' कहलाता है।	काव्य से हृदय में उत्साह, उमंग, आवेश और स्फूर्ति आदि का संचार होना 'ओज गुण' कहलाता है।	काव्य से हृदय में शांति का संचार होना और चित्तगत प्रसन्नता की अनुभूति 'प्रसाद गुण' कहलाता है।

उदाहरण	• 'बसौ मोरे नैनन मा नंदलाल' - मीरा • 'कुंदन को रंग फीको लगे, झलकें अति अंगन चारू गौराई।' -मतिराम	"हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती। स्वयंप्रभा, समुज्ज्वला स्वतंत्रता पुकारती।" - जयशंकर प्रसाद "देशभक्त वीरों मरने से नेक नहीं डरना होगा। प्राणों का बलिदान देश की वेदी पर करना होगा।।"	• "जाकी रही भावना जैसी। प्रभु मूरति देखी तिन तैसी।।" -तुलसीदास • "नर हो न निराश करो मन को" -मैथिलीशरण गुप्त • "चारु चंद्र की चंचल किरणें, खेल रही हैं जल थल में।"-मैथिलीशरण गुप्त
संबद्ध रस	• शृंगार, करुण और शांत	• वीर, रौद्र, भयानक और वीभत्स	• समस्त
भाषागत उल्लेख्य बिंदु	• 'ट-वर्ग' व्यंजन, संयुक्ताक्षरों और दीर्घ समासयुक्त पदों का प्रयोग नहीं होता। • 'र' के मेल से निर्मित पद प्रयोग नहीं किये जाते। • अनुनासिक और अनुस्वार वाले वर्णों की अधिकता।	• द्वित्व वर्णों (ग्ग, क्क, च्च, म्म आदि), संयुक्ताक्षरों, दीर्घ समासयुक्त पदों और 'र' के संयोगयुक्त 'ट-वर्ग' की प्रधानता।	• इसमें जल (माधुर्य गुण) और अग्नि (ओज गुण) का समावेश माना जाता है, अतः भावानुकूल सभी वर्गों का प्रयोग स्वीकृत है। • सरल-सीधे शब्दों में रचना तथा अर्थ की स्पष्टता इसके प्रधान गुण हैं।

- ध्वनि संप्रदाय के **प्रवर्तक आचार्य आनंदवर्धन** माने जाते हैं। इनके द्वारा प्रतिपादित **'ध्वनिरात्मा काव्यस्य'** का समर्थन परवर्ती आचार्यों–अभिनवगुप्त, मम्मट और जगन्नाथ ने भी किया है।

आनंदवर्धन का ध्वनि-निरूपण

- ध्वनि पर पूर्ववर्ती व्याकरण-शास्त्र के **'स्फोट' का अप्रत्यक्ष प्रभाव** है। व्याकरण के 'स्फोट' से आनंदवर्धन ने ध्वनि, व्यंजक और व्यंग्य शब्द ग्रहण कर उन्हें नए संदर्भ में प्रयोग किया।
- जब वाणी में वाच्यार्थ और वाचक-शब्द अपने अस्तित्व को गौण बनाकर अपने से अलग एवं अधिक चमत्कारयुक्त अर्थ को व्यक्त करते हैं तब वह अर्थ 'ध्वनि' कहलाता है।

आ
ध्वनि
गुणीभू
चित्र
आनंद
प्रथम
रूप मे

- आ
  - ◆

- आनंदवर्धन ने वाच्यार्थ और व्यंग्यार्थ (ध्वनि) के संबंध को 'किसी सुंदर स्त्री के सुंदर अव्यव और उनसे फूटते लावण्य' तथा 'दीपशिखा एवं उससे निकलते प्रकाश' के उदाहरणों के माध्यम से स्पष्ट किया है।
- शब्द से प्रतिपादित सामान्य अर्थ को 'वाच्यार्थ' और विशिष्ट अर्थ को 'व्यंग्यार्थ' माना गया। इस 'वाच्यार्थ' और 'व्यंग्यार्थ' में अंतर के आठ आधार उल्लिखित किये-
  - निमित्त कारण
  - आश्रय
  - कार्य
  - काल
  - बोद्धा
  - संख्या
  - विषय
  - स्वरूप
- आनंदवर्धन ने **'वाच्यार्थ' को जान लेने वाले व्यक्ति को 'बोद्धा' और 'व्यंग्यार्थ' को जान लेने वाले को 'सहृदय' माना।**
- **काव्य में 'व्यंग्यार्थ' (ध्वनि)** के होने को **अनिवार्य** घोषित किया। इनके मतानुसार, ध्वनि के अभाव में कोई भी सार्थक कथन काव्य नहीं हो सकता, वह लोकवार्ता या शास्त्रकथन ही होगा।
- ध्वनि की इसी अनिवार्यता को आधार बनाकर काव्य के तीन भेद किये-

आनंदवर्धन	मम्मट	व्यंग्यार्थ का चमत्कार-
ध्वनि काव्य	उत्तम काव्य	वाच्यार्थ से अधिक
गुणीभूतव्यंग्य काव्य	मध्यम काव्य	वाच्यार्थ से कम या समान
चित्र काव्य	अवर काव्य	यह प्रकट रूप में नहीं होता
आनंदवर्धन के अनुसार, इनमें तीनों में ही ध्वनि तत्त्व रहता है किंतु प्रथम दो में यह प्रकटत: (स्पष्ट) होता है और अंतिम में अप्रकट रूप में।		

- आनंदवर्धन ने ध्वनि के विरोधियों के तीन भेद किये-
  - अभाववादी
    - अलंकार और रीति (गुण) को महत्त्व देने वाले आचार्य भामह, दण्डी, उद्भट और वामन हैं।
  - भुक्तिवादी
    - व्यंजना शब्दशक्ति (ध्वनि) को न मानकर लक्षणा (भाक्त) को महत्त्व देने वाले मुकुलभट्ट आदि आचार्य हैं।
    - इन्हें लक्षणावादी एवं भाक्त भी कहा जाता है।

- अनिर्वचनीयतावादी
  - इसमें व्यंग्यार्थ या ध्वनि को अनिर्वचनीय (जिसकी व्याख्या न हो सके) मानने वाले आचार्य हैं।
  - इनका तर्क–व्यंग्यार्थ वाणी का विषय नहीं, वह तो वाच्यार्थ है। व्यंग्यार्थ के हृदय से संबंधित होने के कारण उसको व्यक्त करना संभव नहीं।

निम्नलिखित आचार्यों ने ध्वनि का अंतर्भाव इन तत्त्वों में किया-

- मुकुलभट्ट - लक्षणा में
- कुंतक - व्यंजना में
- महिमभट्ट - अनुमान में
- प्रतिहारेन्दुराज - अलंकार में
- धनंजय - तात्पर्य शक्ति में
- भोजराज - तात्पर्य शक्ति में

- **आचार्य मम्मट** ने अपने ग्रंथ 'काव्यप्रकाश' के 'पंचम उल्लेख' में ध्वनि-विरोधी मतों का खंडन करते हुए पुन: ध्वनि का महत्त्व प्रकट किया।

ध्वनि के भेद

- **मम्मट** ने ध्वनि के **51 भेदों का विवेचन** किया किंतु मुख्यत: तीन ही भेद स्वीकृत किये जाते हैं-
  - वस्तु ध्वनि–(यहाँ. वस्तु शब्द बात का द्योतक है) एक बात से अन्य बात की व्यंजना होना।
  - अलंकार ध्वनि–व्यंग्यार्थ की अभिव्यक्ति अलंकार के रूप में होना।

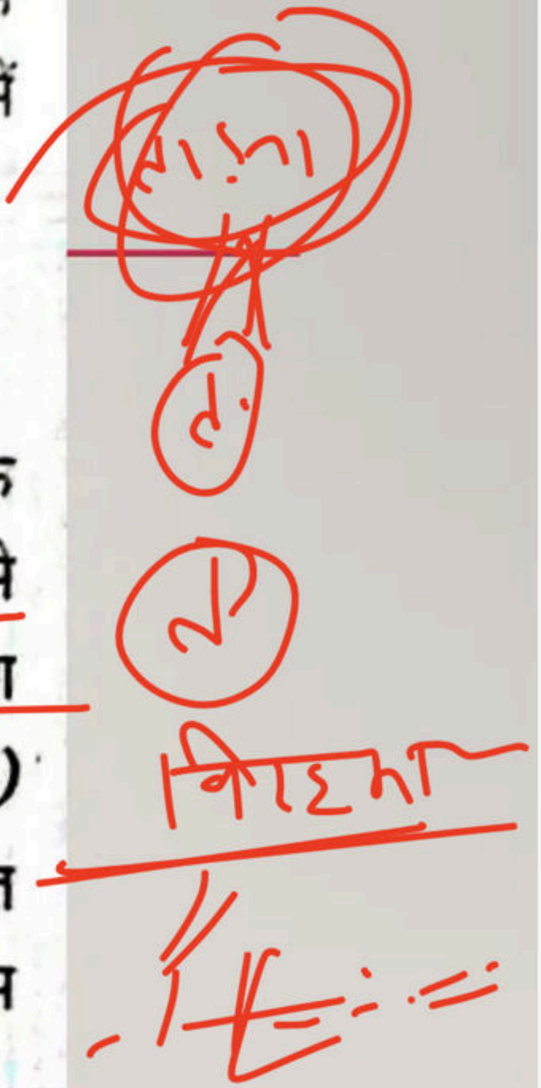
- रस ध्वनि–व्यंग्यार्थ की अभिव्यक्ति का विभावादि भावों के संयोग (रस) पर निर्भर होना।

- **'रस ध्वनि'** को **'असंलक्ष्यक्रम-व्यंग्य ध्वनि'** भी कहते हैं क्योंकि इसमें अपनी त्वरता के कारण व्यंग्यार्थ की प्रतीति लक्षित नहीं हो पाती।
- 'रस ध्वनि' में शृंगार आदि रसों के साथ-साथ कुल आठ काव्य-तत्त्व शामिल हैं-
  - रस
  - भाव
  - रसाभास
  - भावाभास
  - भावोदय
  - भावसंधि
  - भावसबलता
  - भावशांति
- **आनंदवर्धन** ने **'रस ध्वनि'** को ही **ध्वनि की आत्मा** माना है।

- **जगन्नाथ** ने 'रसगंगाधर' में रस की 'संलक्ष्यक्रमता' का मौलिक विवेचन किया। **संलक्ष्यक्रम ध्वनि** से तात्पर्य ऐसी ध्वनि से है जिसमें व्यंग्यार्थ से पहले वाच्यार्थ की प्रतीति होती है।

हिंदी में ध्वनि विषयक मत

- "बहुत से ऐसे शब्द हैं जो सामान्य रीति से एक ही अर्थ व्यंजक हैं, किंतु ध्यानपूर्वक देखने अथवा धातु के अर्थ का विचार करने से पृथक् शब्दों में पृथक्-पृथक् शक्तियों का गर्भित रहना प्रकट होता है।" ***-आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ('रसज्ञ रंजन')***
- "यदि व्यंजना किसी तथ्य की व्यंजना करती है तो यही कि व्यंजित भाव की श्रोता या दर्शक के द्वारा रसरूप में अनुभूति होती है। इस प्रकार रस व्यंजना द्वारा उत्पन्न होता है।"



-आचार्य रामचंद्र शुक्ल ('रस मीमांसा')

- "ध्वनि सिद्धांत का आविर्भाव वास्तव में रस की व्याख्या के लिये किया गया, उसे **स्वयं में कोई संप्रदाय नहीं** कहा जा सकता। ध्वनिमत के द्वारा रस सिद्धांत की जो पुनः प्रतिष्ठा हुई और उसे जो पूर्णता तथा व्याप्ति मिली, उसके कारण भारतीय मानस को उसने सर्वाधिक आकृष्ट किया।" **-आचार्य नंददुलारे वाजपेयी**
- "भाषा संसार का नादमय चित्र है, ध्वनिमय रूप है, वह विश्व के हृत्तंत्री की झंकार है, जिसके स्वर में वह अभिव्यक्ति पाता है।"

-सुमित्रानंदन पंत ('पल्लव' की भूमिका)

- "ध्वनि स्थापना के द्वारा वास्तव में ध्वनिकार ने काव्य में **कल्पना तत्त्व के महत्त्व की ही प्रतिष्ठा** की है।" **-डॉ. नगेंद्र**

- वक्रोक्ति संप्रदाय के **प्रवर्तक आचार्य कुंतक** माने जाते हैं। इनके अनुसार वक्रोक्ति काव्यात्मा है – ***'वक्रोक्तिः काव्यजीवितम्'***।
- कुंतक के विभिन्न पूर्ववर्ती आचार्यों द्वारा वक्रोक्ति संबंधी भिन्न-भिन्न मत तो प्रकट किये गए किंतु परवर्ती आचार्यों ने वक्रोक्ति के काव्य का बाह्य तंत्त्व मात्र होने जैसे विभिन्न कारणों से इस संप्रदाय का समर्थन नहीं किया।

विभिन्न आचार्यों द्वारा वक्रोक्ति-निरूपण

आचार्य भामह और आचार्य दण्डी

- सर्वप्रथम आचार्य भामह ने 'वक्रोक्ति' का विशद विवेचन प्रस्तुत किया।
- भामह ने **'वक्रोक्ति' का अर्थ अतिशयोक्ति** माना तथा इसे **संपूर्ण अलंकारों का मूल** घोषित किया।
- वक्रोक्ति के अभाव में भामह काव्य को कथन-समुदाय मात्र या वार्त्तामात्र ही मानते हैं।
- दण्डी भी 'वक्रोक्ति' का अर्थ तो अतिशयोक्ति से लेते हैं किंतु इसे संपूर्ण अलंकारों का मूल नहीं मानते। अलबत्ता **'स्वभावोक्ति' के अलावा अन्य सभी अलंकारों को वक्रोक्ति का पर्याय माना** है।

- आचा
- दण्डी
  - ◆
  - ◆

परव	
वामन	
रुद्रट	
आनंदव	
भोजराज	
मम्मट	
रुय्यक	
विश्वन	
विद्याना	
अप्पय	
मिश्रबं	

- आचार्य दण्डी के अनुसार, 'स्वभावोक्ति' 'आदि अलंकार' है।
- दण्डी ने संपूर्ण वाङ्मय के दो भाग किये-
  - स्वभावोक्ति
  - वक्रोक्ति

परवर्ती आचार्यों द्वारा प्रस्तुत किये गए वक्रोक्ति के अर्थ

आचार्य	वक्रोक्ति-अर्थ
वामन	लक्षणा आधारित अर्थालंकार*
रुद्रट	शब्दालंकार#
आनंदवर्धन	वाच्यालंकार (अर्थालंकार)+
भोजराज	वक्रवचन
मम्मट	शब्दालंकार
रुय्यक	अर्थालंकार
विश्वनाथ	शब्दालंकार
विद्यानाथ	अर्थालंकार
अप्पयदीक्षित	अर्थालंकार
मिश्रबंधु	अर्थालंकार

- *वामन– 'सादृश्यलक्षणा वक्रोक्तिः'।
- #रुद्रट ने आगे इसके दो भेद भी किये- काकुवक्रोक्ति और श्लेषवक्रोक्ति।
- +आनंदवर्धन 'वक्रोक्ति' को अर्थालंकार मानते हुए 'वाच्य' तथा 'ध्वनि' को 'व्यंग्य' मानते हैं।

आचार्य कुंतक

- **"वक्रोक्तिरेव वैदग्ध्यं-भंगी-भाणितिरुच्यते।"**
  (नए अर्थ को व्यक्त करने वाला कविकर्म-कौशल से रचित वैचित्र्यपूर्ण कथन वक्रोक्ति है।)
- वक्रोक्ति से ही सामान्य कथन में भी लोकोत्तर चमत्कार (काव्य-सौंदर्य) उत्पन्न होने से सहृदयों के लिये आह्लादकारी होने की क्षमता आती है।
- **वक्रोक्ति 'काव्य का अपूर्व अलंकार' है।**
- **वक्रोक्ति 'विचित्र अभिधा' है।**
- यद्यपि वक्रोक्ति के भेदों-उपभेदों को मिलाकर **संख्या 38 तक** पहुँचा दी किंतु **मुख्यतः छः भेद** हैं-
  - ◆ वर्णविन्यासवक्रता
  - ◆ पदपूर्वार्धवक्रता

वर्णविन्यास पर पूर्वार्द्ध पद पाई जाती है प्रयोग अधिक

- पदपरार्धवक्रता
- वाक्यवक्रता
- प्रकरणवक्रता
- प्रबंधवक्रता

हिंदी में वक्रोक्ति-निरूपण

- "वक्रता काव्य का प्राण नहीं है पर वह उसका बाह्य व्यक्तित्व अवश्य है।"
  -महावीरप्रसाद द्विवेदी
- **आचार्य रामचंद्र शुक्ल** के अनुसार,
  - **क्रोचे का अभिव्यंजनावाद 'भारतीय वक्रोक्तिवाद का विलायती उत्थान' है।**
  - मात्र वक्र उक्ति तो सूक्ति का एक रूप अथवा चमत्कार मात्र है, **'भाव-प्रेरित वक्र-उक्ति' काव्य** है।
- "शब्द और अर्थ की यह स्वाभाविक वक्रता, विभिन्न छाया और कांति का सृजन करती है। इस वैचित्र्य का सृजन करना विदग्ध कवि का ही काम है।"
  -जयशंकर प्रसाद
- **"वक्रता काव्य का अनिवार्य माध्यम है,** यह सत्य है; परंतु वह उसका **जीवित या प्राणतत्त्व है, यह सत्य नहीं है।** अनिवार्य माध्यम का भी अपना महत्त्व है, क्योंकि व्यक्तित्व के अभाव में आत्मा की अभिव्यक्ति संभव नहीं है। फिर भी व्यक्तित्व आत्मा अथवा जीवित तो नहीं है।"
  -डॉ. नगेंद्र

औचित्य संप्रदाय

- औचित्य संप्रदाय को बहुत-से विद्वानों ने स्वतंत्र काव्य-संप्रदाय मानने की बजाय विभिन्न काव्य-तत्त्वों में समन्वय स्थापित करने वाला सिद्धांत माना। इसलिये इसे **'समन्वयकारी सिद्धांत'** और इसके **प्रवर्तक (व्यवस्थापक) क्षेमेंद्र** को 'समन्वयकारी आचार्य' भी कहा जाता है।

विभिन्न आचार्यों द्वारा औचित्य-निरूपण

- आरंभिक आचार्यों (भरतमुनि, भामह, दण्डी और उद्भट) ने उचित-अनुचित संबंधी विवेचन प्रस्तुत कर औचित्य संप्रदाय के लिये मार्ग प्रशस्त करने का कार्य तो किया किंतु इन्होंने 'औचित्य' शब्द का प्रयोग नहीं किया।

- आचार्य भरतमुनि ने अपने 'नाट्यशास्त्र' में नाट्य-तत्त्वों के लोकसिद्ध होने और आचार्य भामह ने महाकाव्य के लिये 'लोक-स्वभाव-मुक्त' होने की कसौटी रखकर औचित्य का मूल स्थापित किया।
- आचार्य दण्डी ने भी गुण-दोष विवेचन करते हुए उचित-अनुचित के आधार स्पष्ट किये।
- आचार्य उद्भट ऊर्जस्वि अलंकार के संदर्भ में उचित-अनुचित का उल्लेख करते हैं।

- काव्यशास्त्र के संदर्भ में **'औचित्य' शब्द के सर्वप्रथम प्रयोग** को कन्नौज नरेश **यशोवर्मन** द्वारा अपने **नाटक 'रामाभ्युदय'** में किया गया माना जाता है, किंतु **डॉ. सत्यदेव चौधरी** का यह मत भी उल्लेख्य है- **रुद्रट ने संभवतः सर्वप्रथम 'औचित्य' शब्द का प्रयोग** करते हुए कहा है, **"काव्य** में अनुप्रासवृत्तियों का प्रयोग औचित्य का ध्यान **रखते** हुए करना चाहिये।"

- **आचार्य रुद्रट** ने लिखा-

'वैदर्भीपांचालीं प्रेयसि करुणे भयानकाद्भुतयोः।
लाटीयागौड़ये रौद्र कुर्याद् यथोचित्यम्।।'

- **आचार्य आनंदवर्धन** ने विभिन्न काव्य-तत्त्वों का औचित्य रस के साधन के रूप में विवेचित किया। उनका रसानुकूल प्रयोग ही उचित माना। इन्होंने औचित्य का विशद उल्लेख करते हुए उसके छः प्रकार बताए-

  - रसौचित्य
  - अलंकारौचित्य
  - गुणौचित्य
  - संघटनौचित्य
  - प्रबंधौचित्य
  - रीत्यौचित्य

- **रामचंद्र-गुणचंद** ने 'अनौचित्य' को पाँच रस दोषों में से एक बताया।

आचार्य क्षेमेंद्र

- **'उचितस्य च यो भावस्तदौचित्यं प्रचक्षते'** अर्थात् उचित का भाव ही औचित्य है। काव्यशास्त्र के संदर्भ में इसे ऐसे समझा जा सकता है कि काव्य-तत्त्वों (अलंकार, गुण आदि) के उचित प्रयोग का भाव 'औचित्य' कहलाता है।
- काव्य रससिद्ध होता है और उसकी आत्मा (जीवित) औचित्य-
- **'औचित्यं रससिद्धस्य स्थिरं काव्यस्य जीवितम्'।**
- आचार्य क्षेमेंद्र ने 'औचित्य' के 27 भेद निर्धारित किये-

◆ पद	◆ प्रबंधार्थ	◆ अलंकार
◆ वाक्य	◆ गुण	◆ रस